IJARASEM

ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management

Volume 10, Issue 5, September 2023

INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA

Impact Factor: 6.551

+91 9940572462   +91 9940572462   ijarasem@gmail.com   www.ijarasem.com

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 5, September 2023 |

नीतिशतकम् में लोक जीवन दर्शन

DR. SHAILJA RANI AGNIHOTRI

Associate Professor, Sanskrit S.D. Government College, Beawar, Rajasthan, India

सार

भर्तृहरि का नीतिशतक अनेक नैतिक सिद्धांतों का प्रतिपादन करने वाला उत्कृष्ट ग्रंथ है । इसमें प्रतिपादित सभी नैतिक सिद्धांत किसी विशिष्ट जाति, संप्रदाय, वर्ग आदि से संबद्ध नहीं है । उनमें मनुष्य मात्र के लिए नीति कुशलता के उपदेश हैं । इस कर्मभूमि ने आकर मनुष्य को किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, किन किन गुणों को व्यक्ति संचित करें, अपनी जीवनशैली कैसे बनाएं ? आदि अनेक समाजोपयोगी विषयों पर कवि ने मार्गदर्शक के रुप में प्रकाश डाला है । नीति शतक में वर्णित नीति का संबंध राजनीति से ना होकर लोक व्यवहार श्रृंखला मात्र से है । अतः इस ग्रंथ का मुख्य प्रतिपाद्य लोक व्यवहार कुशलता ही है, राजनीति या अर्थ नीति के विशिष्ट प्रकार का नहीं । इसका संपूर्ण विषय मनुष्य के गंभीर सांसारिक अनुभव पर आधारित है । धर्मात्मा पुरुषों ने लोक से अनुभव प्राप्त कर मानव मात्र के लिए एक सरल जीवन पद्धति निर्मित की है । नीतिशतक की भाषा अत्यंत सरल सरल सुबोध नित्य साधारण जनों के व्यवहार में आने वाली भाषा है । भाषा को बलपूर्वक अलंकारों के बोझ से कहीं भी बोझिल नहीं बनाया गया है । कवि ने सद्गुण, विद्या, मान, वीरता, परोपकार, धर्म तथा स्वाभिमान, भाग्य तथा पुरुषार्थ आदि विषयों पर प्रकाश डाला है । वस्तुतः नीतिशतक में जीवन उपयोगी प्रायः सभी विषयों से संबंधित सुभाषितों का एक अलौकिक संग्रह है । भर्तृहरि नीतिशतक में भाग्य एवं पुरुषार्थ दोनों के सामंजस्य पर बल देते हुए जीवन का मार्ग स्पष्ट किया है अपने वर्ण कि अपने वर्णन की सामाजिक उपयोगिता के कारण तो नीतिशतक का स्थान है ही साथ ही उस में वर्णित जीवन कला व्यक्ति के लिए जीवन दर्शन प्रस्तुत करती है सामाजिक एवं दार्शनिक महत्ता ओं के साथ ही नीति शतक की काव्यात्मक विशेषता भी है जो उसे साहित्य सृजन परंपरा में अपूर्व स्थान प्रदान करती है ।

परिचय

भर्तृहरि एक महान संस्कृत कवि थे। संस्कृत साहित्य के इतिहास में भर्तृहरि एक नीतिकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके शतकत्रय (नीतिशतक, शृंगारशतक, वैराग्यशतक) की उपदेशात्मक कहानियाँ भारतीय जनमानस को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। प्रत्येक शतक में सौ-सौ श्लोक हैं। बाद में इन्होंने गुरु गोरखनाथ के शिष्य बनकर वैराग्य धारण कर लिया था इसलिये इनका एक लोकप्रचलित नाम बाबा भरथरी भी है। वैराग्य के पश्चयात राजस्थान के अलवर जिले में अरावली की पहाड़ियों में कठोर तपस्या की जहाँ पर प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ल अष्टमी को लक्खी मेला लगता है यह मेला राजस्थान के सबसे बड़े और प्रसिद्ध मेलों में से एक है। इस मेले में लाखों श्रद्धालु और पर्यटक भाग लेते हैं।

जीवन चरित

इनके आविर्भाव काल के सम्बन्ध में मतभेद है। इनकी जीवनी विविधताओं से भरी है। राजा भर्तृहरि ने भी अपने काव्य में अपने समय का निर्देश नहीं किया है। अतएव दन्तकथाओं, लोकगाथाओं तथा अन्य सामग्रियों के आधार पर इनका जो जीवन-परिचय उपलब्ध है वह इस प्रकार है :

परम्परानुसार भर्तृहरि विक्रमसंवत् के प्रवर्तक के अग्रज माने जाते हैं। विक्रमसंवत् ईसवी सन् से ५६ वर्ष पूर्व प्रारम्भ होता है जो विक्रमादित्य के प्रौढ़ावस्था का समय रहा होगा। भर्तृहरि विक्रमादित्य के अग्रज थे, अत: इनका समय कुछ और पूर्व रहा होगा। विक्रमसंवत् के प्रारम्भ के विषय में भी विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ लोग ईसवी सन् ७८(78) और कुछ लोग ई० सन् ५४४ में इसका प्रारम्भ मानते हैं। ये दोनों मत भी अग्राह्य प्रतीत होते हैं। फारसी ग्रंथ कलितौ दिमनः में पंचतंत्र का एक पद्य 'शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनम्' का भाव उद्धृत है। पंचतंत्र में अनेक ग्रंथों के पद्यों का संकलन है। संभवतः पंचतंत्र में इसे नीतिशतक से ग्रहण किया गया होगा। फारसी ग्रंथ ५७९ ई० से ५८१ ई० के एक फारसी शासक के निमित्त निर्मित हुआ था। इसलिए राजा भर्तृहरि अनुमानत: ५५० ई० से पूर्व हम लोगों के बीच आये थे। भर्तृहरि उज्जयिनी के राजा थे।[1,2,3] ये 'विक्रमादित्य' उपाधि धारण करने वाले चन्द्रगुप्त द्वितीय के बड़े भाई थे। इनके पिता का नाम चन्द्रसेन था। पत्नी का नाम पिंगला था जिसे वे अत्यन्त प्रेम करते थे।

इन्होनें सुन्दर और रसपूर्ण भाषा में नीति, वैराग्य तथा श्रृंगार जैसे गूढ़ विषयों पर शतक-काव्य लिखे हैं। इस शतकत्रय के अतिरिक्त, वाक्यपदीय नामक एक उच्च श्रेणी का व्याकरण ग्रन्थ भी इनके नाम पर प्रसिद्ध है। कुछ लोग भट्टिकाव्य के रचयिता भट्टि से भी उनका ऐक्य मानते हैं। ऐसा कहा जाता है कि नाथपंथ के वैराग्य नामक उपपंथ के ये ही प्रवर्तक थे। चीनी यात्री इत्सिंग के अनुसार इन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था परन्तु अन्य सूत्रों के अनुसार ये अद्वैत वेदान्ताचार्य थे। चीनी यात्री इत्सिंग के यात्रा विवरण

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 5, September 2023 |

से यह ज्ञात होता है कि ६५१ ईस्वी में भर्तृहरि नामक एक वैयाकरण की मृत्यु हुयी थी। इस प्रकार इनका सातवीं शताब्दी का प्रतीत होता है परन्तु भारतीय पुराणों में इनके सम्बन्ध में उल्लेख होने से संकेत मिलता है कि इत्सिंग द्वारा वर्णित भर्तृहरि कोई अन्य रहे होंगे।

लोककथाएँ

भर्तृहरि जी की एक कथा बहुत प्रसिद्ध है जो बताती है कि वे कैसे सन्यासी बने। वह कथा नीचे दी गयी है किन्तु भर्तृहरि के नीतिशतक के आरम्भिक श्लोक में इसी को संकेत रूप में कहा गया है-

यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता
साप्यन्यम् इच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः ।
अस्मत्कृते च परिशुष्यति काचिद् अन्या
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च ॥
(अर्थ - मैं जिसका सतत चिन्तन करता हूँ वह (पिंगला) मेरे प्रति उदासीन है। वह (पिंगला) भी जिसको चाहती है वह (अश्वपाल) तो कोई दूसरी ही स्त्री (राजनर्तकी) में आसक्त है। वह (राजनर्तकी) मेरे प्रति स्नेहभाव रखती है। उस (पिंगला) को धिक्कार है ! उस अश्वपाल को धिक्कार है ! उस (राजनर्तकी) को धिक्कार है ! उस कामदेव को धिक्कार है और मुझे भी धिक्कार है !)

इनके एक और रानी अनंगसेना थी जिसको राजा बहुत प्यार करते थे। उसका राजा के घोड़े के चरवाहे चंद्रचूड़ से भी प्यार था और सेनापति से भी था। उस सेनापति का नगरवधू रूपलेखा के घर भी आना जाना था। राजा भी उस रूपलेखा के यहाँ चंद्रचूड़ कोचवान के साथ बग्घी में बैठकर जाते थे। इस तरह चंद्रचूड़ और सेनापति दोनों का ही रानी अनंगसेना और रूपलेखा से प्यार का सम्बन्ध था। यह बात योगी गोरखनाथ जी को पता चली तो उन्होंने ही किसी ब्राह्मण के साथ अमरफल भेजा।

राजा ने वो अमरफल रानी अनंगसेना को दिया। रानी ने वो अमरफल चंद्रचूड़ को दिया। चंद्रचूड़ ने उस अमरफल को लिया और जब वो राजा भर्तहरी को रूपलेखा के यहाँ ले गया। तब राजा जब मदहोश हो गया तब चंद्रचूड़ ने उसके साथ प्यार कर के वो अमरफल रूपलेखा को यह कहकर दे दिया की वो उसको खायेगी तो अमर हो जायेगी और उसका चिरकाल तक यौवन बना रहेगा।[4,5,6]

वही फल रूपलेखा ने राजा को दे दिया की वो उसको खाएंगे तो अमर हो जायेंगे। क्योंकि वो खुद के जीवन से घृणा करती थी। उस फल को देख राजा क्रोधित हो गए। पूछने पर रूपलेखा ने चंद्रचूड़ का नाम बताया की उसीने उसको अमरफल दिया था। जब चंद्रचूड़ को राजा ने तलवार निकाल कर सच पूछा तो उसने रानी अनंगसेना के साथ अपने सम्बन्ध कबूले और सेनापति का भी भेद बताया।

उस दिन अमावस्या की रात थी। राजा आगबबूला होकर नंगी तलवार लिए शोर करता हुआ अनंगसेना के आवास की तरफ बढ़ चला। अनंगसेना ने राजा के क्रोध से डरकर सच मान लिया। लेकिन उसी अमावस्या की रात रानी ने आत्मदाह कर लिया। सईस चंद्रचूड़ को देश निकाला दिया गया और सेनापति को मृत्युदंड दिया गया। अब राजा उदास रहते थे। पिंगला ने ही उनको आखेट के लिए भेजा था। फिर आखेट के समय एक सैनिक मारा गया तो उसकी पत्नी उसकी देह के साथ सती हो गई। राजा सोच में पड़ गया। एक नारी थी अनंगसेना। एक नारी है रूपलेखा। और एक नारी है उस सैनिक की पत्नी। क्या है नारी??

अब पिंगला वाली बात आती है जब राजा की मौत का झूठा समाचार सुनते ही रानी मरने को तैयार हो जाती है। जब गोरखनाथ जी मृत हिरन को जीवित कर देते है तब वो राजपाट से बहुत ऊबे हुए होते है। गोरखनाथ जी एक शर्त रखते हैं कि वो रानी पिंगला को माता कहकर महल से भिक्षा लाएं तो ही वे उनको अपना शिष्य बनायेगे। रानी पिंगला बहुत पतिवृता थी। भगवा धारण करके राजमहल के द्वार आकर राजा भृतहरि आवाज लगाते है:-अलख निरंजन। माता पिंगला भिक्षाम् देहि। पिंगला रानी की आँखों से जल धारा बह निकलती है। काफी वार्तालाप के बाद रानी भिक्षा पात्र में डाल देती है। इसके बाद गोरखनाथ जी उनको शिष्य बनाकर अपने साथ ले जाते हैं।

किंवदन्तियाँ

इनके जीवन से सम्बन्धित कुछ किंवदन्तियाँ इस प्रकार है -

एक बार राजा भर्तृहरि अपनी पत्नी पिंगला के साथ जंगल में शिकार खेलने के लिये गये हुए थे। वहाँ काफी समय तक भटकते रहने के बाद भी उन्हें कोई शिकार नहीं मिला। निराश पति-पत्नी जब घर लौट रहे थे, तभी रास्ते में उन्हें हिरनों का एक झुण्ड दिखाई दिया। जिसके आगे एक मृग चल रहा था। भर्तृहरि ने उस पर प्रहार करना चाहा तभी पिंगला ने उन्हें रोकते हुए अनुरोध किया कि महाराज, यह मृगराज ७ सौ हिरनियों का पति और पालनकर्ता है। इसलिये आप उसका शिकार न करें। भर्तृहरि ने पत्नी की बात

नहीं मानी और हिरन को मार डाला जिससे वह मरणासन्न होकर भूमि पर गिर पड़ा। प्राण छोड़ते-छोड़ते हिरन ने राजा भर्तृहरि से कहा- तुमने यह ठीक नहीं किया। अब जो मैं कहता हूँ उसका पालन करो। मेरी मृत्यु के बाद मेरे सींग श्रृंगीबाबा को, मेरे नेत्र चंचल नारी को, मेरी त्वचा साधु-संतों को, मेरे पैर भागने वाले चोरों को और मेरे शरीर की मिट्टी पापी राजा को दे दो। हिरन की करुणामयी बातें सुनकर भर्तृहरि का हृदय द्रवित हो उठा। हिरन का कलेवर घोड़े पर लाद कर वह मार्ग में चलने लगे। रास्ते में उनकी मुलाकात बाबा गोरखनाथ से हुई। भर्तृहरि ने इस घटना से अवगत कराते हुए उनसे हिरन को जीवित करने की प्रार्थना की। इस पर बाबा गोरखनाथ ने कहा- मैं एक शर्त पर इसे जीवनदान दे सकता हूँ कि इसके जीवित हो जाने पर तुम्हें मेरा शिष्य बनना पड़ेगा। राजा ने गोरखनाथ की बात मान ली।

भर्तृहरि ने वैराग्य क्यों ग्रहण किया यह बतलाने वाली अन्य किंवदन्तियां भी हैं जो उन्हें राजा तथा विक्रमादित्य का ज्येष्ठ भ्राता बतलाती हैं। इनके ग्रंथों से ज्ञात होता है कि इन्हें ऐसी प्रियतमा से निराशा हुई थी जिसे ये बहुत प्रेम करते थे। नीति-शतक के प्रारम्भिक श्लोक में भी निराश प्रेम की झलक मिलती है। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने प्रेम में धोखा खाने पर वैराग्य जीवन ग्रहण कर लिया था, जिसका विवरण इस प्रकार है। इस अनुश्रुति के अनुसार एक बार राजा भर्तृहरि के दरबार में एक साधु आया तथा राजा के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करते हुए उन्हें एक अमर फल प्रदान किया। इस फल को खाकर राजा या कोई भी व्यक्ति अमर को सकता था। राजा ने इस फल को अपनी प्रिय रानी पिंगला को खाने के लिए दे दिया, किन्तु रानी ने उसे स्वयं न ख़ाकर अपने एक प्रिय सेनानायक को दे दिया जिसका सम्बन्ध राजनर्तिकी से था। उसने भी फल को स्वयं न खाकर उसे उस राजनर्तिकी को दे दिया। इस प्रकार यह अमर फल राजनर्तिकी के पास पहुँच गया। फल को पाकर उस राजनर्तिकी ने इसे राजा को देने का विचार किया। वह राजदरबार में पहुँची तथा राजा को फल अर्पित कर दिया। रानी पिंगला को दिया हुआ फल राजनर्तिकी से पाकर राजा आश्चर्यचकित रह गये तथा इसे उसके पास पहुँचने का वृत्तान्त पूछा। राजनर्तिकी ने संक्षेप में राजा को सब कुछ बतला दिया। इस घटना का राजा के ऊपर अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ा तथा उन्होंने संसार की नश्वरता को जानकर संन्यास लेने का निश्चय कर लिया और अपने छोटे भाई विक्रम को राज्य का उत्तराधिकारी बनाकर वन में तपस्या करने चले गये। इनके तीनों ही शतक उत्कृष्टतम संस्कृत काव्य हैं। इनके अनेक पद्य व्यक्तिगत अनुभूति से अनुप्राणित हैं तथा उनमें आत्म-दर्शन का तत्त्व पूर्णरूपेण परिलक्षित होता है।[7,8,9]

भविष्य पुराण से ज्ञात होता है कि राजा विक्रमादित्य का समय अत्यन्त सुख और समृद्धि का था। उस समय उनके राज्य में जयंत नाम का एक ब्राह्मण रहता था। घोर तपस्या के परिणाम स्वरूप उसे इन्द्र के यहाँ से एक फल की प्राप्ति हुई थी जिसकी विशेषता यह थी कि कोई भी व्यक्ति उसे खा लेने के उपरान्त अमर हो सकता था। फल को पाकर ब्राह्मण अपने घर चला आया तथा उसे राजा भर्तृहरि को देने का निश्चय किया और उन्हें दे दिया। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार भर्तृहरि विक्रमादित्य के बड़े भाई तथा भारत के प्रसिद्ध सम्राट थे। वे मालवा की राजधानी उज्जयिनी में न्याय पूर्वक शासन करते थे। उनकी एक रानी थी जिसका नाम पिंगला बताया जाता है। राजा उससे अत्यन्त प्रेम करते थे, जबकि वह महाराजा से अत्यन्त कपटपूर्ण व्यवहार करती थी। यद्यपि इनके छोटे भाई विक्रमादित्य ने राजा भर्तृहरि को अनेक बार सचेष्ट किया था तथापि राजा ने उसके प्रेम जाल में फँसे होने के कारण उसके क्रिया-कलापों पर ध्यान नहीं दिया था। उस अनुश्रुति के आधार पर यह संकेत मिलता है कि भर्तृहरि मालवा के निवासी तथा विक्रमादित्य के बड़े भाई थे।

काव्य शैली

भर्तृहरि संस्कृत मुक्तककाव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। इन्हीं तीन शतकों के कारण उन्हें एक सफल और उत्तम कवि माना जाता है। इनकी भाषा सरल, मनोरम, मधुर,रसपूर्ण तथा प्रवाहमयी है। भावाभिव्यक्ति इतनी सशक्त है कि वह पाठक के हृदय और मन दोनों को प्रभावित करती है। उनके शतकों में छन्दों की विविधता है। भाव और विषय के अनुकूल छन्द का प्रयोग, विषय के अनुरुप उदाहरण आदि से उनकी सूक्तियाँ जन-जन में प्रचलित रही हैं और समय-समय पर जीवन में मार्गदर्शन और प्रेरणा देती रही हैं।

नीतिशतकम् भर्तृहरि के तीन प्रसिद्ध शतकों जिन्हें कि 'शतकत्रय' कहा जाता है, में से एक है। इसमें नीति सम्बन्धी सौ श्लोक हैं।

नीतिशतक में भर्तृहरि ने अपने अनुभवों के आधार पर तथा लोक व्यवहार पर आश्रित नीति सम्बन्धी श्लोकों की रचना की है। एक ओर तो उसने अज्ञता, लोभ, धन, दुर्जनता, अहंकार आदि की निन्दा की है तो दूसरी ओर विद्या, सज्जनता, उदारता, स्वाभिमान, सहनशीलता, सत्य आदि गुणों की प्रशंसा भी की है। नीतिशतक के श्लोक संस्कृत विद्वानों में ही नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं में समय-समय पर सूक्ति रूप में उद्धृत किये जाते रहे हैं।

संस्कृत विद्वान और टीकाकार भूधेन्द्र ने नीतिशतक को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया है, जिन्हें 'पद्धति' कहा गया है-

- मूर्खपद्धति
- विद्वत्पद्धति
- मान-शौर्य-पद्धति

- अर्थपद्धति
- दुर्जनपद्धति
- सुजनपद्धति
- परोपकारपद्धति
- धैर्यपद्धति
- दैवपद्धति
- कर्मपद्धति

निम्नलिखित नीति श्लोक में कवि ने बड़े ही सुन्दर ढंग से धन का महत्त्व प्रतिपादित किया है-

> यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।
> स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ते ॥
>
> (अर्थ - जिसके पास वित्त होता है, वही कुलीन, पण्डित, बहुश्रुत और गुणवान समझा जाता है । वही वक्ता और सुन्दर भी गिना जाता है । सभी गुण स्वर्ण पर आश्रित हैं ।)[10,11,12]

भर्तृहरि का नीतिशतकम्, जैसा कि नाम से ही पता चलता है, मानव व्यवहार की नैतिकता और नैतिकता पर सौ छंदों का एक संग्रह है। उन्होंने इन सौ श्लोकों को दस-दस श्लोकों के दस विषयों में विभाजित किया है।
प्रत्येक विषय मानव मन के एक विशेष पहलू से संबंधित है जो अच्छे सामाजिक व्यवहार के लिए महत्वपूर्ण है।
उनकी लेखनी में सूक्ष्म हास्य भी है।
उद्देश्य
समाज में सामाजिक मूल्यों की समझ और सराहना पैदा करना ताकि लोग अपराध मुक्त, समृद्ध और सामंजस्यपूर्ण जीवन जी सकें।
अपेक्षित परिणाम
पाठ्यक्रम के अंत में, शिक्षार्थियों को यह ज्ञान प्राप्त होगा कि कैसे प्राचीन भारत ने जीवन के मूल्यों का पालन किया, संवेदी और परा संवेदी दुनिया में सामंजस्य स्थापित किया, जो कि भारत की इस पवित्र भूमि में अभी भी प्रचलन में है।
पाठ्यक्रम
भरत की सांस्कृतिक छत्रछाया के अंतर्गत सामाजिक जीवन के दस पहलुओं का विस्तृत अध्ययन किया जाएगा।

- मुर्कहा पद्धति (मूर्खता पर)
- विद्वत पद्धति (छात्रवृत्ति पर)
- मान शौर्य पद्धति (आत्मसम्मान पर)
- अर्थ पद्धति (धन पर)
- दुर्जन पद्धति (दुष्ट लोगों पर)
- सज्जन पद्धति (पवित्र लोगों पर)
- परोपकार पद्धति (दूसरों की मदद करने पर)
- धैर्य पद्धति (वीरता पर)
- दैव पद्धति (भाग्य पर)
- कर्म पद्धति (काम पर)[13,14,15]

विचार-विमर्श

शृंगारशतकम् भर्तृहरि के तीन प्रसिद्ध शतकों (शतकत्रय) में से एक है। इसमें शृंगार सम्बन्धी सौ श्लोक हैं।

विषयवस्तु

इस रचना में कवि ने रमणियों के सौन्दर्य का तथा उनके पुरुषों को आकृष्ट करने वाले शृंगारमय हाव-भावों का चित्रण किया है। इस शतक में कवि ने स्त्रियों के हाव-भाव, प्रकार, उनका आकृषण व उनके शारीरिक सौष्ठव के बारे में विस्तार से चर्चा की है। कवि का कहना है कि इन्द्र आदि देवताओं को भी अपने कटाक्षों से विचलित करने वाली रमणियों को अबला मानना उचित नहीं है। नारी अपने आकर्षक हाव-भावों से मानव मन को आकृष्ट करके बाँध लेती है - "समस्तभावैः खलु बन्धनं स्त्रियः"। इसके अतिरिक्त भर्तृहरि ने अपने शतक में वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त व शिशिर ऋतु में स्त्री व स्त्री प्रसंग का अत्यधिक शृंगारिक (कामुक)

वर्णन किया है। वास्तव में इस शतक में सांसारिक भोग और वैराग्य इन दो विकल्पों के मध्य अनिश्चय की मनोवृत्ति का चित्रण हुआ है जो वैराग्यशतक में पहुँचकर निश्चयात्मक बन जाती है।

शतक के मंगलाचरण में ही कामदेव को नमस्कार करते हुये भर्तृहरि कहते है-

जिसने विष्णु और शिव को मृग के समान नयनों वाली कामिनियों के गृहकार्य करने के लिये सतत् दास बना रखा है, जिसका वर्णन करने में वाणी असमर्थ है ऐसे चरित्रों से विचित्र प्रतीत होने वाले उस भगवान पुष्पायुध (कामदेव) को नमस्कार है। ।।१।।

भर्तृहरि बताते हैं कि स्त्री किस प्रकार मनुष्य के संसार बन्धन का कारण है-

मन्द मुस्कराहट से, अन्तकरण के विकाररूप भाव से, लज्जा से, आकस्मिक भय से, तिरछी दृष्टि द्वारा देखने से, बातचीत से, ईर्ष्या के कारण कलह से, लीला विलास से-इस प्रकार सम्पूर्ण भावों से स्त्रियां पुरूषों के संसार-बंधन (?) का कारण हैं। २॥

इसके उपरान्त स्त्रियों के अनेक आयुध (हथियार) गिनाए हैं-

भौंहों के उतार-चढ़ाव आदि की चतुराई, अर्द्ध-उन्मीलित नेत्रों द्वारा कटाक्ष, अत्यधिक स्निग्ध एवं मधुर वाणी, लज्जापूर्ण सुकोमल हास, विलास द्वारा मन्द-मन्द गमन और स्थित होना-ये भाव स्त्रियों के आभूषण भी हैं और आयुध (हथियार) भी हैं। ।।३।।

और देखिए भर्तृहरि शृंगारशतक में सबसे उत्तम किसे गिनाते हैं-

इस संसार में नव-यौवनावस्था के समय रसिकों को दर्शनीय वस्तुओं में उत्तम क्या है? मृगनयनी का प्रेम से प्रसन्न मुख। सूंघने योग्य वस्तुओं में क्या उत्तम है? उसके मुख का सुगन्धित पवन। श्रवण योग्य वस्तुओं में उत्तम क्या है? स्त्रियों के मधुर वचन। स्वादिष्ट वस्तुओं में उत्तम क्या है? स्त्रियों के पल्लव के समान अधर का मधुर रस। स्पर्श योग्य वस्तुओं में उत्तम क्या है? उसका कुसुम-सुकुमार कोमल शरीर। ध्यान करने योग्य उत्तम वस्तु क्या है? सदा विलासिनियों का यौवन विलास। ।।७।।[16]

विभिन्न ग्रहों से स्त्रियों की तुलना कितनी आकर्षक है-

> स्तन भार के कारण देवगुरू बृहस्पति के समान, कान्तिमान होने के कारण सूर्य के समान, चन्द्रमुखी होने के कारण चन्द्रमा के समान, और मन्द-मन्द चलने वाली अथवा शनैश्चर-स्वरूप चरणों से शोभित होने के कारण सुन्दरियां ग्रह स्वरूप ही हुआ करती है। ।।१६।।

संस्कृत साहित्य के सुप्रसिद्ध ग्रंथ "शतकत्रयम्" के रचयिता भर्तृहरि के बारे में दो-चार शब्द इसी चिटठे में मैंने पहले कभी लिखे हैं ।

उक्त ग्रंथ का एक खंड है नीतिशतकम् जिसमें नीति संबंधी लगभग 100 छंद हैं । इन्हीं में से दो चुने हुए श्लोक मैं आगे प्रस्तुत कर रहा हूं । इन श्लोकों में रचनाकार ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि साहित्य, संगीत आदि से वंचित मनुष्य किसी पशु से भिन्न नहीं रह जाता है । उसका जीवन किसी चौपाये के जीवन से बहुत अलग नहीं दिखाई देता है ।

भर्तृहरिरचित नीतिशतकम् से उद्धृत उक्त श्लोक ये हैं:

साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः ।

तृणं न खादन्नपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम् ॥12॥

(साहित्य-संगीत-कला-विहीनः पुच्छ-विषाण-हीनः साक्षात् पशुः तृणम् न खादन् अपि जीवमानः, तद् पशूनाम् परमम् भाग-धेयं ।)

अर्थ – जो मनुष्य साहित्य, संगीत, कला, से वंचित होता है वह बिना पूंछ तथा बिना सींगों वाले साक्षात् पशु के समान है । वह बिना घास खाए जीवित रहता है यह पशुओं के लिए निःसंदेह सौभाग्य की बात है ।

येषां न विद्या न तपो न दानं ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः ।

ते मृत्युलोके भुवि भारभूता मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥13॥

(येषाम् न विद्या न तपः न दानम् न ज्ञानम् न शीलम् न गुणः न धर्मः ते मृत्यु-लोके भुवि भार-भूता मनुष्यरूपेण मृगाः चरन्ति ।)

अर्थ – जिन मनुष्यों के पास विद्या, तप, दान की भावना, ज्ञान, शील (सत्स्वभाव), मानवीय गुण, धर्म में संलग्नता का अभाव हो वे इस मरणशील संसार में धरती पर बोझ बने हुए मनुष्य रूप में विचरण करने वाले पशु हैं ।

इन नीतिश्लोकों के रचयिता राजा भर्तृहरि यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि मनुष्य की दैनिक चर्या यदि पेट पालने अथवा उससे कुछ कदम आगे सुखभोग के साधन जुटाने तक सीमित रहे तो उसमें और जानवरों में कोई खास फर्क नहीं रह जाता है । वह बस मनुष्य रूप धारण किए होता है, अन्यथा उसके प्रयास पशुओं की तरह महज जीवित बने रहने तक ही सीमित रहते हैं । खाओ-पिओ और सुखःभोग करो यही उसके जीवन का उद्येश्य रह जाता है । पशुवृंद भी यही तो करते हैं, अंतर केवल यह रहता कि उनका सुखभोग खाने-पीने के बाद आराम करने तक सीमित रहता है, जब कि बौद्धिकता के कारण मनुष्य के लिए सुखभोग में बहुत कुछ और भी शामिल रहता है । कवि इस बात पर जोर डालना चाहते हैं कि मनुष्य की पशुओं से भिन्नता शारीरिक संरचना तक सीमित न रह कर उसके आगे बढ़कर विविध कलाओं में दिलचस्पी लेना, चिंतन-मनन की सामर्थ्य हासिल करना, विद्या का अर्जन करना, परोपकारादि कार्य में संलग्न होना, आध्यात्मिक ज्ञान में रुचि रखना, आदि में केंद्रित होनी चाहिए । जो इस प्रकार के उन्नत दर्जे के कर्मों में नहीं लगता मनुष्य रूप में उसके जीवन की सार्थकता वस्तुतः संदिग्ध हो जाती है । वे धरती के लिए एक प्रकार से बोझ ही कहे जा सकते हैं ।

भर्तृहरि राजा द्वारा विरचित शतकत्रयम् संस्कृत साहित्य की छोटी किंतु गंभीर अर्थ रखने वाली चर्चित रचना है । कहा जाता है कि उन्हें प्रौढ़ावस्था पार करते-करते वैराग्य हो गया था और तदनुसार उन्होंने राजकार्य से संन्यास ग्रहण कर लिया था । उनके बारे में संक्षेप में मैंने किसी अन्य ब्लॉग-प्रविष्टि में दो-चार शब्द लिखे हैं । अपनी उक्त रचना के प्रथम खंड, 'नीतिशतकम्', के आरंभ में उन्होंने यह कहा है कि मूर्ख व्यक्ति को समझाना असंभव-सा कार्य है । इस संदर्भ में उनके तीन छंद मुझे रोचक लगे, जिनका उल्लेख मैं आगे कर रहा हूं ।

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रञ्जयति ॥
(भर्तृहरि विरचित नीतिशतकम्, श्लोक 3)
अज्ञः सुखम् आराध्यः, सुखतरम् आराध्यते विशेषज्ञः, ज्ञान-लव-दुः-विदग्धं ब्रह्मा अपि तं नरं न रञ्जयति ।

अर्थः गैरजानकार मनुष्य को समझाना सामान्यतः सरल होता है । उससे भी आसान होता है जानकार या विशेषज्ञ अर्थात् चर्चा में निहित विषय को जानने वाले को समझाना । किंतु जो व्यक्ति अल्पज्ञ होता है, जिसकी जानकारी आधी-अधूरी होती है, उसे समझाना तो स्वयं सृष्टिकर्ता ब्रह्मा के भी वश से बाहर होता है ।

"अधजल गगरी छलकत जात" की उक्ति अल्पज्ञ जनों के लिए ही प्रयोग में ली जाती है । ऐसे लोगों को अक्सर अपने ज्ञान के बारे में भ्रम रहता है । गैरजानकार या अज्ञ व्यक्ति मुझे नहीं मालूम कहने में नहीं हिचकता है और जानकार की बात स्वीकारने में नहीं हिचकता है । विशेषज्ञ भी आपने ज्ञान की सीमाओं को समझता है, अतः उनके साथ तार्किक विमर्ष संभव हो पाता है, परंतु अल्पज्ञ अपनी जिद पर अड़ा रहता है ।

अगले छंद में कवि भर्तृहरि मूर्ख को समझाने के प्रयास की तुलना कठिनाई से साध्य कार्यों से करते हैं, और इस प्रयास को सर्वाधिक दुरूह कार्य बताते हैं ।[14,15,16]

प्रसह्य मणिमुद्धरेन्मकरदंष्ट्रान्तरात्
समुद्रमपि सन्तरेत् प्रचलदुर्मिमालाकुलाम् ।
भुजङ्गमपि कोपितं शिरसि पुष्पवद्धारयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत् ॥
(पूर्वोक्त, श्लोक 4)
प्रसह्य मणिम् उद्धरेत् मकर-दंष्ट्र-अन्तरात्, समुद्रम् अपि सन्तरेत् प्रचलत्-उर्मि-माला-आकुलाम्, भुजङ्गम् अपि कोपितं शिरसि पुष्पवत् धारयेत्, न तु प्रति-निविष्ट-मूर्ख-जन-चित्तम् आराधयेत् ।

अर्थः मनुष्य कठिन प्रयास करते हुए मगरमच्छ की दंतपंक्ति के बीच से मणि बाहर ला सकता है, वह उठती-गिरती लहरों से व्याप्त समुद्र को तैरकर पार कर सकता है, क्रुद्ध सर्प को फूलों की भांति सिर पर धारण कर सकता है, किंतु दुराग्रह से ग्रस्त मूर्ख व्यक्ति को अपनी बातों से संतुष्ट नहीं कर सकता है ।

जिन कार्यों की बात की गयी है उन्हें सामान्यतः कोई नहीं कर सकता है; कोई भी उन्हें करने का दुस्साहस नहीं करना चाहेगा । फिर भी उन्हें करने में सफलता की आशा की जा सकती है, परंतु तुलनया देखें तो मूर्ख का पक्ष जीतना उनसे भी कठिनतर होता है ।

इसके आगे राजा भर्तृहरि यह कहने में भी नहीं चूकते हैं कि असंभव माना जाने वाला कार्य कदाचित् संभव हो जाए, लेकिन मूर्ख को संतुष्ट कर पाना फिर भी संभव नहीं है ।

लभेत् सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीडयन्
पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दितः ।
कदाचिदपि पर्यटञ्छशविषाणमासादयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत् ॥
(पूर्वोक्त, श्लोक 5)
लभेत् सिकतासु तैलम् अपि यत्नतः पीडयन्, पिबेत् च मृग-तृष्णिकासु सलिलं पिपासा-आर्दितः, कदाचित् अपि पर्यटन् शश-विषाणम् आसादयेत्, न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत् ॥

अर्थः कठिन प्रयास करने से संभव है कि कोई बालू से भी तेल निकाल सके, पूर्णतः जलहीन मरुस्थलीय क्षेत्र में दृश्यमान मृगमरीचिका में भी उसके लिए जल पाकर प्यास बुझाना मुमकिन हो जावे, और घूमते-खोजने अंततः उसे खरगोश के सिर पर सींग भी मिल जावे, परंतु दुराग्रह-ग्रस्त मूर्ख को संतुष्ट कर पाना उसके लिए संभव नहीं ।

उक्त छंद में अतिरंजना का अंलकार प्रयुक्त है । यह सभी जानते हैं कि बालू से तेल लिकालना, जल का भ्रम पैदा करने वाली मृगतृष्णा में वास्तविक जल पाकर प्यास बुझाना, और खरगोश के सिर पर सींग खोज लेना जैसी बातें वस्तुतः असंभव हैं । कवि का मत है कि मूर्ख को सहमत कर पाना इन सभी असंभव कार्यों से भी अधिक कठिन है ।

एक प्रश्न है जिसका उत्तर देना मुझे कठिन लगता है । मूर्ख किसे कहा जाए इसका निर्धारण कौन करे, किसे निर्णय लेने का अधिकार मिले ? स्वयं को मूर्ख कौन कहेगा ? मेरे मत में वह व्यक्ति जो अपने विचारों एवं कर्मों को संभव विकल्पों के सापेक्ष तौलने को तैयार नहीं होता, खुले दिमाग से अन्य संभावनाओं पर ध्यान नहीं देता, आवश्यकतानुसार अपने विचार नहीं बदलता, अपने आचरण का मूल्यांकन करते हुए उसे नहीं सुधारता और सर्वज्ञ होने या दूसरों से अधिक जानकार होने के भ्रम में जीता है वही मूर्ख है

परिणाम

वैराग्यशतकम् भर्तृहरि के तीन प्रसिद्ध शतकों (शतकत्रय) में से एक है। इसमें वैराग्य सम्बन्धी सौ श्लोक हैं। शतकत्रय में अन्य दो हैं- श्रृंगारशतकम् व नीतिशतकम्।

विषयविवरण

1. तृष्णादूषणम्
2. विषयपरित्याग-विडम्बना
3. याज्ञा-दैन्यदूषणम्
4. भोगास्थैर्यवर्णनम्
5. कालमहिमा
6. यति-नृपति-सम्भाषणम्
7. मनःसम्बोधन-नियमनम्
8. नित्यानित्यविचारः
9. शिवार्चनम्
10. अवधूतचर्या

पानी की तरंग और बुलबुले के समान इस चंचल और नश्वर जीवन में प्राणियों को भला सुख कहाँ मिल सकता है। वृद्धावस्था में जीर्ण तथा झुर्रियों वाले अंगों से युक्त होकर मनुष्य को सब कुछ छोड़कर काल के गर्त में जाना पड़ता है - भोगों को भोगना समाप्त नहीं होता अपितु व्यक्ति ही समाप्त हो जाता है। कवि ने कितनी गम्भीर बात कही है-

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः ।।
कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः ।।७।।

(अर्थ - भोगों को हमने नहीं भोगा, बल्कि भोगों ने ही हमें ही भोग लिया । तपस्या हमने नहीं की, बल्कि हम खुद तप गए । काल (समय) कहीं नहीं गया बल्कि हम स्वयं चले गए । इस सभी के बाद भी मेरी कुछ पाने की तृष्णा नहीं गयी (पुरानी नहीं हुई) बल्कि हम स्वयं जीर्ण हो गए ।।)

इस प्रकार भृतहरि ने यहाँ संसार की आसारता और वैराग्य के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। इस शतक में काव्य-प्रतिभा और दार्शनिकता का अद्भुत समन्वय किया गया है। इसमें सांसारिक आकर्षणों और भोगों के प्रति उदासीनता के उभरते हुये भावों का चित्रण दिखायी देता है। कवि की तो यही कामना है कि किसी पुण्यमय अरण्य में शिव-शिव का उच्चारण करते हुये उसका समय बीतता जाये।

कुछ प्रसिद्ध श्लोक

यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता
साप्यन्यं इच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः ।
अस्मत्कृते च परिशुष्यति काचिद् अन्या
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च ॥

(अर्थ - मैं जिसका सतत चिन्तन करता हूँ वह (पिंगला) मेरे प्रति उदासीन है। वह (पिंगला) भी जिसको चाहती है वह (अश्वपाल) तो कोई दूसरी ही स्त्री (राजनर्तकी) में आसक्त है। वह (राजनर्तकी) मेरे प्रति स्नेहभाव रखती है। उस (पिंगला) को धिक्कार है ! उस (अश्वपाल) को धिक्कार है ! उस (राजनर्तकी) को धिक्कार है ! उस कामदेव को धिक्कार है और मुझे भी धिक्कार है !)

भोगे रोगभयं कुले च्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयं
मौने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जरायाभयम् ।
शास्त्रे वादिभयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयं
सर्वं वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम् ।। (- वैराग्यशतकम् ३१)

(अर्थ - भोग करने पर रोग का भय, उच्च कुल मे जन्म होने पर बदनामी का भय, अधिक धन होने पर राजा का भय, मौन रहने पर दैन्य का भय, बलशाली होने पर शत्रुओं का भय, रूपवान होने पर वृद्धावस्था का भय, शास्त्र मे पारङ्गत होने पर वाद-विवाद का भय, गुणी होने पर दुर्जनों का भय, अच्छा शरीर होने पर यम का भय रहता है। इस संसार मे सभी वस्तुएँ भय उत्पन्न करने वालीं हैं। केवल वैराग्य से ही लोगों को अभय प्राप्त हो सकता है।)

इधर दो-चार दिनों से 'सत्यम' नामक सॉफ्टवेयर कंपनी समाचार माध्यमों का विषय बना हुआ है, किसी सार्थक उपलब्धि के कारण नहीं, बल्कि अरबों रुपयों के घोटाले के कारण । कंपनी के अध्यक्ष पर सब की नजर है कि कैसे उन्होंने अमीरी की सीमा रातों-रात कहीं आगे बढ़ा लेने की लालसा में एक जबरदस्त घोटाला कर डाला । इस घटना की खबर ने मेरा ध्यान इन सूक्तियों की ओर खींच डाला:

सुमहान्त्यपि शास्त्राणि धारयन्तो बहुश्रुताः ।
छेत्तारः संशयानां च क्लिश्यन्ते लोभमोहिताः ।। 26 ।।
लोभात्क्रोधः प्रभवति लोभात्कामः प्रजायते ।
लोभान्मोहश्च नाशश्च लोभः पापस्य कारणम् ।। 27 ।।
(नारायणपण्डितसंगृहीत हितोपदेश)

(अनेकों शास्त्रों का ज्ञाता तथा श्रोता, समस्याओं-शंकाओं के समाधान में निपुण पंडित भी लोभ-लालच के वशीभूत होकर क्लेश यानी कष्ट की अवस्था को प्राप्त हो जाता है । लोभ से क्रोध उत्पन्न होता है, लोभ से कामना, यानी और अधिक अर्जित करने की इच्छा, जागृत होती है, लोभ से व्यक्ति मोह या भ्रम में पड़ता है, और उसी से विनाश की स्थिति पैदा होती है; वस्तुतः लोभ पाप का कारण है ।)

मैं समझता हूं कि लोभ करना और अधिकाधिक भौतिक संपदा बटोरना मनुष्य की निसर्ग से जन्मी स्वाभाविक वृत्ति है । उससे मुक्त होने के लिए मनुष्य को तप का सहारा लेना पड़ता है, अर्थात् आत्मसंयम का भाव मन में लाना होता है । धन-संपदा मानव समाज में सदा से ही महत्त्वपूर्ण रहे हैं, किंतु मनीषियों एवं विचारकों ने सदा ही समाज को उसकी सीमा निर्धारित करने का उपदेश दिया है । 'अति सर्वत्र वर्जितम्' उनके द्वारा प्रचारित नीति रही है । किसी व्यक्ति को कितना चाहिए इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए और उसी के अनुसार धन कमाने का प्रयास करना चाहिए और अति नहीं करनी चाहिए ।

पूर्व काल में लोग धन-संपदा को आवश्यक मानते थे, लेकिन उसे ही सब कुछ मान के नहीं बैठ जाते थे । एक समय था जब लोग अपने समस्त समय, ऊर्जा और बुद्धि का उपयोग केवल धनोपार्जन के लिए नहीं करते थे । धन कमाते समय वे समाज के हित-अहित के प्रति उदासीन नहीं हो जाते थे । लोगों के लिए ज्ञानार्जन, अध्यात्म, दर्शन, धार्मिक कृत्य समाज सेवा और सांस्कृतिक कार्य आदि का भी महत्त्व होता था । किंतु आज हम ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं जहां जीवन का सर्वप्रथम लक्ष्य – और कभी-कभी

एकमेव लक्ष्य – धनोपार्जन रह गया है । रातदिन यह चिंता बनी रहती है कि कैसे अधिकाधिक धन-संपदा जुटायी जाये । आज का मानव जीवन प्रतिस्पर्धात्मक बन चुका है । वह अपनी भौतिक संपदा की तुलना अन्य लोगों से अधिक करता है और इस भावना के साथ संतुष्ट नहीं हो पाता है कि उसकी आवश्यकताएं तो पूरी हो रही हैं, दूसरे से क्या तुलना करना । उसकी लालसा रहती है कि वह संपदा के मामले में अपने रिश्तेदारों, मित्र-परिचितों, पड़ोसियों, एवं सहकर्मियों आदि से आगे निकल जाये । तुलना के अन्य आधारों की कोई अहमियत आज के युग में नहीं है । हर कोई ईमानदारी, परोपकार, जनसेवा, निष्ठापूर्वक दायित्व-निर्वाह आदि में आगे रहने को मुर्खता मानता है । सादगी का जीवन तो विवशता से जोड़ा जाता है । धन को लेकर मानव-मन इतना उत्साहित है कि अपने पास जो भी खूबी हो उसे बाजार में उतारने को तैयार है । किसी व्यवसाय की महत्ता उससे जुड़े आर्थिक लाभ से आंकी जाती है । जब शारीरिक सौंदर्य और आध्यात्मिक ज्ञान तक बिकाऊ हो सकते हैं तो फिर बचता क्या है ? दूसरों द्वारा लगाये गये मिथ्या लांछनों तक की भरपायी धन से संभव है । हर चीज की कीमत पैसा ! ऐसे धन के प्रति आकर्षण स्वाभाविक ही है ।[13,14] मुझे राजा एवं कवि भर्तृहरि के ये वचन याद आ रहे हैं:

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ।। 41 ।।
(भर्तृहरिविरचित नीतिशतकम्)

(जिसके पास धन है वही उच्च कुल का है, वही जानकार पंडित है, वही शास्त्रों का ज्ञाता है, वही दूसरों के गुणों का आकलन करते की योग्यता रखता है, वही प्रभावी वक्ता है, उसी का व्यक्तित्व दर्शनीय है । यह सब इसलिए कि सभी गुण धन के प्रतीक कांचन अर्थात् सोने पर निर्भर हैं । धन है तो वे गुण भी हैं, अन्यथा वे भी नहीं हैं ।)

वस्तुतः धन के बल पर ऐसे लोग जुटाये जा सकते हैं जो किसी भी व्यक्ति को ऊपर कही बातों के योग्य मानने को तैयार हों और फलतः वह व्यक्ति अयोग्य होते हुए भी सबसे आगे सिद्ध हो जाये । मैं समझता हूं कि राजा भर्तृहरि के काल में धन की इतनी महत्ता नहीं रही होगी और उपर्युक्त बातें उन्होंने एक व्यंग के तौर पर कही होंगी । परंतु आज तो धन ही सब कुछ प्रतीत होता है.

(अस्वीकरण: मैं एक नौसिखिया हूं और शास्त्रीय संस्कृत साहित्य में गहराई की कमी है। मैं उस क्षेत्र में अनुवाद के सहारे चलता हूं और अक्सर अपने शिक्षकों के ज्ञान पर निर्भर रहता हूं। मैं यहां जो कुछ भी साझा कर रहा हूं वह चर्चा शुरू करने और शायद प्रतिबिंब के लिए है। इसलिए मैं इसे "अवलोकन" कहता हूं, भर्तृहरि के 100 छंदों के संग्रह, जिसे नीति शतकम् कहा जाता है, का एक नज़दीकी दृश्य। नेट पर बहुत कुछ उपलब्ध नहीं है, और मुझे लगता है कि इसे खोजना दिलचस्प हो सकता है)

कल मैंने भर्तृहरि के नीतिशतक में 'मुक्तक' रूप के सौ श्लोकों की समीक्षा की। मेरी किताब कहती है कि मुक्तक एक पद है - दो से चार पंक्तियों का एक सेट, जिसमें प्रत्येक का अपना स्वायत्त विषय और संदेश होता है। इस प्रकार, एक मानक कविता में - मान लीजिए, एक गीत, अर्थ स्थायी, अंतरा आदि जैसे भागों के माध्यम से विकसित होता है। मुक्तक काव्य काव्य में बनाया गया एक कोलाज है।

भर्तृहरि के नीतिशतकम् को कुछ विषयों में क्रमबद्ध किया जा सकता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि वह इस वर्णन से शुरू करते हैं कि कैसे वह मूर्खों को बिल्कुल असहनीय पाते हैं (प्रार्थना और कामदेव के शाप के बाद पहले तीन श्लोक)। फिर वह सज्जन/महात्मा/... संक्षेप में उन लोगों के बारे में लिखते हैं जिनका अनुकरण किया जाना चाहिए। फिर वह दुर्जन/विषैले लोगों, उनके व्यवहार और गुणों का स्पष्ट रूप से उपहास या आलोचना भी करता है कि उनका अनुकरण नहीं किया जाना चाहिए। बेशक, वह कुछ सामान्य विषयों पर कुछ और मुक्तक भी लिखते हैं।

भर्तृहरि एक राजा थे, जो प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य के बड़े भाई थे। आश्चर्यजनक रूप से, उन्होंने सिंहासन त्याग दिया और संन्यासी बन गये। ऐसी अफवाहें हैं कि ऐसा इसलिए था क्योंकि उसकी पत्नी, जिससे वह बहुत प्यार करता था, किसी और से प्यार करती थी।

[संयोग से, उनका दूसरा श्लोक (भगवान को नमस्कार के पहले श्लोक के बाद) है, यं चिन्तयामि सतत सा माया विरक्ता / सस्प्यान्यमिच्छति जनं संजनोसअन्योसाक्त:। अस्मत्कृते परितुष्यतिचिदन्या / धिक्तां च तं चादनं च इमां च मां च ॥ 2॥ भावार्थ है- जिसका मैं निरंतर चिंतन करता रहता हूं, वह अब मुझमें नहीं है। वह एक ऐसे पुरुष की चाहत रखती है जो किसी दूसरे पर मुग्ध हो। कोई औरत है जो मुझे चाहती है. भाड़ में जाए मेरी प्रेमिका, यह आदमी, कामदेव, यह औरत और मैं। बेशक, यह कुछ भी आत्मकथात्मक साबित नहीं होता है।] मैं इस गंभीर अहसास के बावजूद दूसरी कविता पर चर्चा नहीं करने जा रहा हूं कि एक राजा जिसके पास सारी संपत्ति और शक्ति है, वह भी प्रेम के मामले में विलाप कर रहा है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 5, September 2023 |

तीसरे पर आगे बढ़ें:

अज्ञ: सुखमाराध्य: सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञ:

ज्ञानलवदुर्विदग्घं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति ॥3॥

अज्ञ:= कोई ऐसा व्यक्ति जो किसी विषय पर रिक्त हो सुखमार्ध्य: = प्रसन्न करना (मनाना?) ख़तरामाराध्यते = (सुखतरम्+राध्यते) अधिक आसानी से प्रसन्न/मनाना विशेषज्ञ: = विशेषज्ञ ज्ञानलव्दुर्विदग्घं = (ज्ञान+लव+दु:+विदग्धम्)) बुरी तरह से (आधा नहीं) थोड़े से ज्ञान से पका हुआ ब्रह्मास्पि = यहां तक कि ब्रह्मा, निर्माता तं = उसे नरं = मन रंजयति = प्रसन्न/मनाया नहीं जा सकता

किसी ऐसे व्यक्ति को मनाना आसान है जो विषय के बारे में कुछ नहीं जानता है। किसी विशेषज्ञ को मनाना आसान होता है। लेकिन (भगवान न करे!) अगर आपको कभी किसी ऐसे व्यक्ति को मनाना पड़े जिसके पास गलत जगहों पर थोड़ा सा भी खराब ज्ञान हो - तो आप क्या, ब्रह्मा भी खुश नहीं हो सकते!

वर्तमान नेतृत्व और परिवर्तन प्रबंधन साहित्य "बस में सही लोगों को लाने" पर बहुत जोर देता है -

कहीं ये वो तो नहीं?

यदि आप एक प्रबंधक होते और यदि आपके ब्लॉक में दुर्विद्घ लोग होते, तो क्या आपको उनसे छुटकारा पाने की आवश्यकता नहीं होती?

यदि आप एक नियोक्ता हैं तो कहना आसान है लेकिन करना आसान नहीं है - यदि आप एक प्रशिक्षक होते तो आप क्या करते? अभिभावक? जीवनसाथी?? क्या होगा अगर मोटे सिर वाले के पास भी कुछ ऐसा हो जिस पर आप गंभीर रूप से निर्भर हों? यदि आप ऐसे भागीदार के साथ संविदात्मक दायित्व से बंधे हों तो क्या होगा??

भर्तृहरि मूर्ख और मोटे सिर वालों के संबंध में कई छंद प्रस्तुत करते हैं। एक राजा और एक उच्च कोटि का तपस्वी अपने शतक के शीर्ष पर मूर्खों का वर्णन क्यों करेगा? हम्म, आपकी राय क्या है?

प्रसह्यमणिमुद्धरेण्मकरवक्रदंस्त्रानकुरात् समुद्रमपसंतरेत् प्रचल्दुर्मिमलाकुलम्।

भुजंगमपि कोपितम् शिरसि पुष्पवद्धारयेन्न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजान्चित्तमाआराधयेत् ॥ 4 ॥

(कोई मगरमच्छ के दांतों से जबरन गहना निकाल सकता है, कोई समुद्र की उत्तेजित लहरों की श्रृंखला पर (नंगे हाथों की मदद से) तैर सकता है, कोई क्रोधित सांप को सिर पर भी रख सकता है मानो यह फूलों की माला हो - लेकिन (कृपया, क्षमा करें -) कोई जिद्दी मूर्ख के मन को राजी/खुश नहीं कर सकता।)

प्रसह्य = बलपूर्वक मणिमुद्धरेन्मकर्वक्रदंस्त्रांकुरात् = मणिम्+उद्धरेत्+मकर+वक्र+दंस्त्र+अंकुरात् = मगरमच्छ के आरी जैसे दांतों में फंसा हुआ रत्न प्राप्त कर सकते हैं। उत्तेजित लहरों की रेखाओं पर रेखाओं के ऊपर भुजंगमपि = पूर्व संध्या पर एक साँप कोपिटम् = क्रोधित शिरसि = सिर पर पुष्पवद्धारयेत् = पुष्पवत्+धारयेत् = धारण कर सकते हैं जैसे फूलों का एक लॉरेल न तु = लेकिन नहीं प्रतिनिविष्ट = एक प्रतिबद्ध, जिद्दी मूर्खजनचित्तम् = फूल +जन+चित्तम् = मूर्ख की मानसिकता आराध्येत् = मनाया/प्रसन्न किया जा सकता है

लभेत् सिक्तासु तैलमपियत्नत: पीड्यन् पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दित

कदाचिदपि पर्यटन शशविषाणमासादयेन्न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजान्चित्तमाराध्येत् ॥ 5 ॥

(यदि आप रेत को खूब पीसते हैं, तो आप उसमें से तेल निकाल सकते हैं। यदि आप बहुत प्यासे हैं, तो आप मृगतृष्णा से ही पानी पी सकते हैं। यदि आप भटकते हैं, तो शायद आपको खरगोश का सींग मिल जाए। . लेकिन कोई भी जिद्दी मूर्ख को अपने मन को राजी/खुश नहीं कर सकता।)[15]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 5, September 2023 |

लभेत् = सिक्तासु = रेत से खोज सकते हैं तैलमपियत्नत: = तेल, प्रयास से पीडयन् = पीसकर पीबेच्च = और पी सकते हैं मृगतृष्णिकासु = मृगतृष्णा से सलिलं = पानी पिपासार्दित = काफी प्यास लगी है कदाचिदपि = शायद पर्यटन = भटकना/यात्रा करना शशविषाणमासादयेत् = एक सींग ढूंढ सकते हैं खरगोश का -न्न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाआराधयेत् = पिछली पंक्ति की अंतिम पंक्ति के समान अर्थ

तो मैं सोच रहा हूं कि 'मूर्खों' के प्रति शून्य सहिष्णुता क्यों? श्लोक 4 और 5 कुछ और प्रकाश डालते हैं। ध्यान दें कि भर्तृहरि "प्रतिनिविष्ठ मूर्ख:" वाक्यांश का उपयोग करते हैं, जिसका अर्थ है ऐसा व्यक्ति जो प्रतिबद्धता और जिद से मूर्ख हो। इसका मतलब है कि ऐसे व्यक्ति से अज्ञानता और क्षमता की कमी को दूर नहीं किया जा सकता क्योंकि उनमें सीखने की संभावना बहुत कम होती है।

ये लोग, विशेषकर जब किसी राजा (सीईओ या किसी शीर्ष प्रबंधक) के आसपास प्रमुख पदों पर हों, लचीलेपन, अनुकूलनशीलता और परिवर्तन को अवरुद्ध करेंगे।[14,15]

निष्कर्ष

नीतिशतक 25 का एक आलोचनात्मक संस्करण

मंगलाचरण (मंगलचरण)
व्यसन की आलोचना (आसक्ति की निंदा)
अविवेक या अतार्किकता की प्रकृति (अल्पज्ञता का स्वभाव)
मूर्ख व्यक्ति का स्वभाव (मूर्खों का स्वभाव)
दुष्ट व्यक्ति का स्वभाव (दुष्ट का स्वभाव)
मौन का मूल्य (मौन का महात्म्य)
अल्पज्ञान: अहंकार का स्रोत (अल्पज्ञता: अहंकार की जननी)
दुष्ट के लक्षण (नीच का स्वभाव)
विवेकहीन व्यक्ति का पतन (विवेकभ्रष्ट व्यक्ति का अधर्मपतन)
मूर्खता का कोई उपचार नहीं (मूर्खता का कोई उपचार नहीं है)
महत्व मानव जाति का साहित्य, संगीत और कला में निहित है
(साहित्य, संगीत और कला से ही मनुष्यत्व की सार्थकता)
इस ग्रह पर बोझ कौन हैं? (कैसे लोग इस धरती पर भारी हैं)
मूर्खों की कंपनी की नीचता (मूर्ख लोग गठबंधन के संबंध की तुष्टिता)
पांडित्य और उत्कृष्टता के लायक (वैदुष्य और सद्‌गुणों का मूल्य)
विद्या के धन की प्रधानता (विद्याधन की उपयोगिता)
विद्वान पुरुषों का तिरस्कार क्या अनुचित है (विद्या का गुण)
कोई किसी की कुशलता और योग्यता से वंचित नहीं कर सकता (किसी की क्षमता या कला को कोई नहीं छीन सकता)
परिष्कृत और सुसंस्कृत वाणी ही व्यक्ति का एकमात्र आभूषण है (संस्कृति वाणी ही मनुष्य का अक्षय कौशल है)
एक व्यक्तिगत बिना सीखना एक जानवर है (ज्ञान के बिना पशु-तुल्य)
समाज में क्षमा जैसे मूल्यों का महत्व (समाज में क्षमा आदि सद्‌गुणों की महिमा)
सामाजिक व्यवस्था के मूल्य (सामाजिक प्रतिष्ठा के कारक गुण)
अच्छी संगति के लाभ (सत्संगती के) लाभ)
कवियों की अमरता (कवित्व की अमरता)
भगवान विष्णु की कृपा से सभी ऐश्वर्य की प्राप्ति
सार्वभौमिक कल्याण का मार्ग (सर्वशास्त्रसम्मत कल्याण का मार्ग)
किसी कार्य को पूरा करने के तीन तरीके (कार्य-संपादन के नीच, मध्यम और उत्तम मार्ग)
सही और चुनौतीपूर्ण सद्‌गुणी लोगों का आचरण (सज्जनों का दुष्कर एवं न्यायोचित मार्ग)
दुर्भावनापूर्ण कार्य के प्रति सद्‌गुणी लोगों की घृणा
(स्वाभिमानी व्यक्तित्व का महत्वविरुद्ध नीच कार्य के प्रति अरुचि)
एक बहादुर का अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त करने का प्रयास (स्वाभिमानी व्यक्ति की स्वसत्त्वानुरूप फलेच्छा)
एक की आवेगशीलता एक महान का मतलब और दृढ़ता (नीच की अधिरता और महान की धीता)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 5, September 2023 |

इस ग्रह पर एक सफल जन्म का कारण (संसार में सफल जन्म का कारण)
महान व्यक्तियों के दोहरे तरीके (मनस्वी व्यक्तित्व की दो गति)
महान लोगों की शत्रुता (महान) व्यक्तित्व की शत्रुता)
महान लोगों की अनंत उत्कृष्टता (महापुरुषों की महानता की निःसीमता)
पिता को संकट में छोड़ना अनैतिक और निंदनीय है
(पिता को संकट में छोड़ना अनुचित है)
एक उत्साही व्यक्ति कभी अपमान बर्दाश्त नहीं करता (तेजस्वी व्यक्तित्वों का तिरस्कार न सहना)
वीरता के लिए उम्र कभी बाधक नहीं होती (उम्र तेजस्विता का कारण नहीं)
धन की महिमा (समाज में धन की मान्यता)
धन समाज में महत्वपूर्ण ऊर्जा है (समाज में धन की प्राण-तुल्य प्रमुखता)
सभी गुण धन में आश्रय (धन में ही सारे गुण निहित हैं
(अधापतन के कारण) बर्बादी के कारण (
धन का सदुपयोग) धन का उचित उपयोग (धन का सदुपयोग)
दुबलापन भी चमक सकता है (क्षीणता भी वैभव का कारण)
संपत्ति का महत्व स्थिति पर निर्भर करता है (अवस्थानरूप कीमती का महत्व)
पालन-पोषण पृथ्वी (विषय) (प्रजा-पालन)
राजाओं की विविध नीति (राजनीति की अनेकरूपता)
राजा की सेवा करने के लाभ (राजाश्रय से लाभ)
धन पूर्वनिर्धारित है (धन का भाग्यायत्तत्व)
आश्रितों से याचना का इंतजार नहीं करना चाहिए (आश्रितों से याचना) की अनपेक्ष्यता)
संकट को सभी के साथ साझा नहीं किया जाना चाहिए (सबके सामने अपनी दीनोक्ति का प्रकाशन अनुचित)
दुष्ट आचरण (दुष्ट-स्वभाव)
बुराई से बचना (दुर्जन की प्रतिकूलता)
बुराई द्वारा मेधावी के गुणों को गलत तरीके से प्रस्तुत करना (दुर्जन द्वारा दोष-दर्शन))
लोभ जैसे अवगुणों की निंदा (लोभ आदि दुर्गुणों की निंदा एवं सत्य आदि सद्गुणों की प्रशंसा)
मन के सात कांटे (मन की व्यथा के सात काँटे)
राजा का क्रोध सार्थक नहीं (राजा का अपमान)
आचार संहिता की असंवेदनशीलता सेवा में (सेवाधर्म की दुरूहता)
दुष्टों की सेवा दुःख उत्पन्न करती है (नीच प्रभु की सेवा दुःखद)
दुष्ट और सज्जनों की मित्रता में अंतर (दुष्टों एवं सज्जनों की मैत्री में भेद)
शत्रुता का निषेध (अकार वैर-भाव की निंदा) सम्मान सज्जनता का (सज्जनों की पूज्यता)
महान व्यक्तित्वों के सहज लक्षण (महात्माओं के प्राकृतिक सिद्ध स्वभाव)
सद्गुणी लोगों का सही और चुनौतीपूर्ण आचरण (सज्जनों का दुष्कर और न्यायोचित मार्ग)
महान लोगों के आभूषण (महापुरुषों के मंडन)
समृद्धि और महान व्यक्तियों के आचरण प्रतिकूलता (संपत्ति और विपन्नता में महापुरुषों के आचरण)
आचरण कंपनी से प्राप्त होता है (गुणों का संस्कार से ही उत्पन्न होता है)
सर्वश्रेष्ठ पुत्र, पत्नी और मित्र कौन हैं? (श्रेष्ठ पुत्र, पत्नी एवं मित्र कौन होते हैं)
आगमन और संयम के तरीके (प्रवृत्ति एवं निवृत्ति के मार्ग)
सद्गुणों का शानदार आचरण (सज्जनों का महान आचरण)
सद्गुणों का स्वभाव (गुणी लोगों का स्वभाव)
नैतिक मूल्य वास्तविक है एक व्यक्ति का आभूषण (नैतिक मूल्य से ही मनुष्य की वास्तविक शोभा)
एक सच्चे मित्र के लक्षण पवित्र मित्र का लक्षण
दूसरों के हित में अच्छे लोगों की भक्ति (सज्जनों का परहितोद्योग)
दूसरों के कल्याण को अनावश्यक रूप से नष्ट करने की कंजूसी (निर्मम पर-पीडन की हकीकत)
आदर्श मित्रता (आदर्श मित्रता)
सागर की सहनशीलता (समुद्र की सहनशीलता)
सद्गुणी लोगों का आदर्श व्यवहार (सज्जनों का आचरण)
पवित्र पुरुष जो दूसरों के गुणों की प्रशंसा करते हैं वे दुर्लभ हैं (दूसरों के गुणगान करने वाले सज्जनों की विरलता)
महानता उत्कृष्टता का पुनरुत्पादन करती है सामान्य (तुच्छ को भी महान बनाना ही महानता)

दृढ़ व्यक्तियों के निरंतर प्रयास (धैर्यवान व्यक्तित्व का अविरत उद्यम)
एक दृढ़ व्यक्ति की दृढ़ता (मनस्वी व्यक्ति की कर्मनिष्ठा)
अच्छा आचरण सबसे अच्छा आभूषण है ("शील" - दृढ़ निश्चय)
का अधिकार दृढ़ निश्चयी व्यक्ति (धीर पुरुषों की न्यायोन्मुखता)
भाग्य ही उत्थान और पतन का एकमात्र कारण है (भाग्य ही वृद्धि एवं क्षय का कारण) सद्गुणों
के लिए आपदाओं की क्षणभंगुरता (सज्जनों की विपत्ति का अस्थायित्व)
परिश्रम ही वास्तविक परिजन है (उद्यम ही वास्तविक बंधु)
धैर्य संकट में (विपत्ति में गंभीरता)
भाग्य की सामर्थ्य दैव (भाग्य) ही शरण
चिंतन ही किसी के कार्य और प्रवृत्ति को आकार देता है (विवेक ही कर्म और बुद्धि का निर्माता)
आपदाएं हमेशा दुर्भाग्य का अनुसरण करती हैं (विपत्ति दुर्भाग्य से ही समाप्त होती है)
भाग्य प्रबल है (दैव की बलवत्ता)
मानव जीवन की क्षणभंगुरता (मनुष्य जीवन की क्षणभंगुरता)
नियति अमिट है (विधि का विधान अपरिमर्जनीय)
क्रिया की क्षमता (कर्म की बलियता)
कर्म या क्रिया को श्रद्धांजलि (कर्म की स्तुति)
नियति के रूप में कार्य परिणाम देता है (तपःपूत संचित कर्म) ही भाग्य का कारण)
पिछली अवस्था में अर्जित सद्गुण कठिनाई में रक्षा करते हैं (पूर्व जन्म का सुकृत ही विपत्ति में सहायक)
अच्छे आचरण की महिमा (सत्कर्म का महात्म्य)
आवेग के परिणाम कष्टदायक होते हैं (अविचारित कर्म का परिणाम दुःखद)
तपस्या की प्रधानता कर्तव्यों के प्रति समर्पण (कर्त्तव्यनिष्ठता-रूपी तपस्याचरण की श्रेष्ठता)
नियति पर कभी काबू नहीं पाया जा सकता (अनहोनी होती नहीं और होती नहीं)
सभी अच्छे मोड़ पूर्व अर्जित गुणों का परिणाम होते हैं (पूर्व कृत सुकृत ही अनुपयुक्तता का कारण)
गुणों के साथ वस्तुओं की वास्तविक प्रकृति और अवगुण (लाभ-क्षी आदि गुणों का वास्तविक स्वरूप)
उदारता के लक्षण (मनस्विता के लक्षण)
संसार में मेधावी लोगों की कमी (पृथ्वी पर गुणों की दुर्लभता)
धैर्य का महत्व (धैर्य का महत्व)
एक सुलझे हुए व्यक्ति की सफलता (धीर व्यक्ति की) विजयवाद)
वीर व्यक्तित्व की स्वतंत्रता (वीर पुरुष की अन्य निरपेक्षता)
गुण की प्रकृति को वश में करना (शीलस्वभाव की वशीकरणवाद)
वादा तोड़ने की अनुचितता (प्रतिज्ञा-भंग का अनाउचित्य)[16]

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1) श्रृंगारशतकम्
2) वैराग्यशतकम्
3) भर्तृहरिविरचित नीतिशतक
4) नीति शतकम् (हिन्दी अर्थ सहित)
5) भरथरी
6) श्रृंगारशतक
7) नीतिशतक
8) वैराग्यशतक
9) वाक्यपदीय
10) भर्तृहरि और उनका भाषा-चितंन
11) भर्तृहरिविरचित नीतिशतक
12) वाक्यपदीय (विकिपुस्तक)
13) The Vākyapadīya of Bhartṛhari: Kāṇḍa II., Volume 2 (Google book By K.A. Subramania Iyer, Bhartṛhari)
14) सम्पूर्ण भर्तृहरि नीति शतक हिंदी और अंग्रेजी में
15) भर्तृहरि-सिद्ध और सत्र Archived 2018-09-09 at the वेबैक मशीन
16) बिना अमरफल खाए अमर हुए भर्तृहरि (नवभारत टाइम्स)

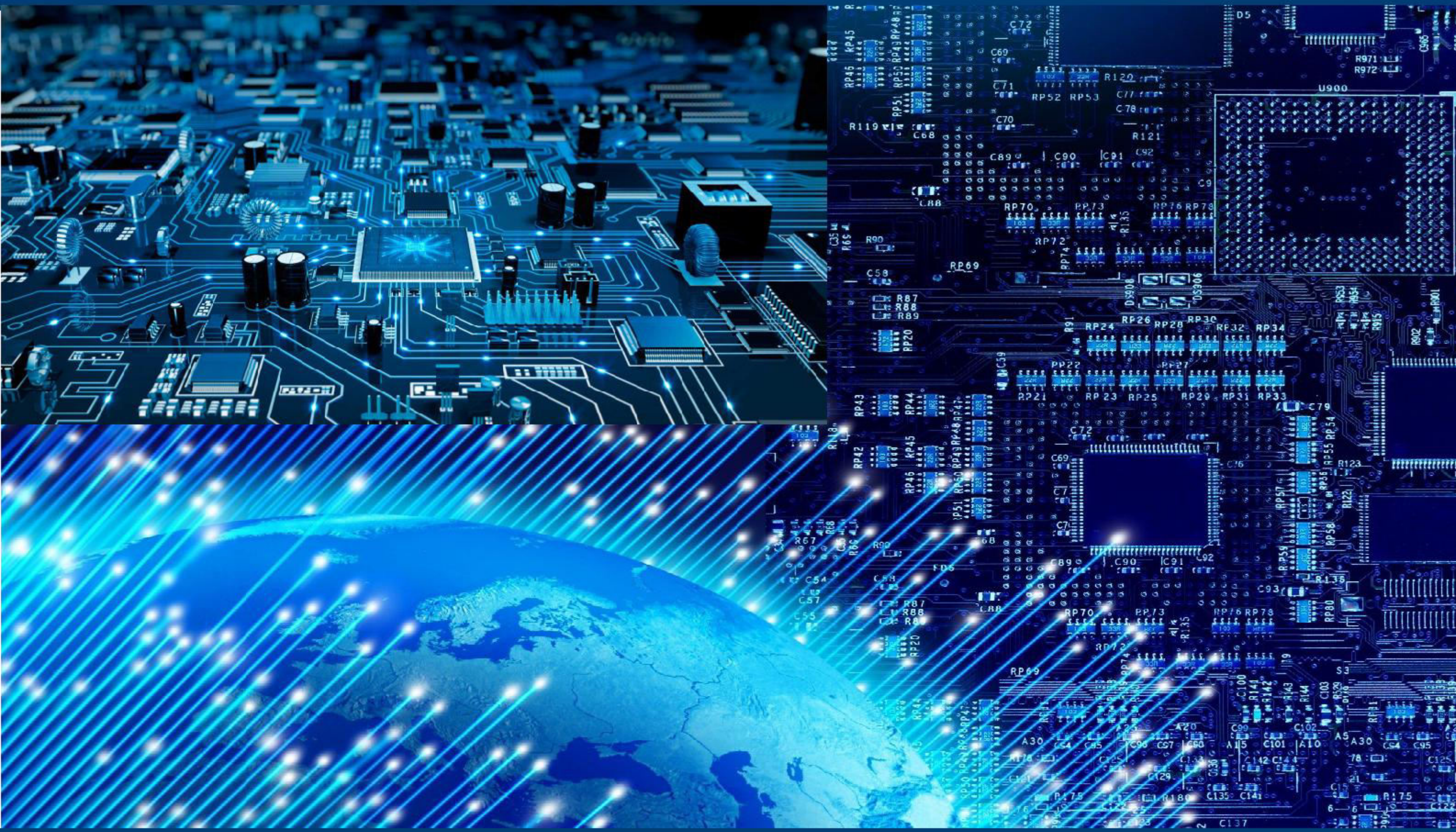

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

IJARASEM

NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |

www.ijarasem.com